॥ हरिः शरणम् ॥

पण्डित गङ्गाधर पाठक 'मैथिल'

सबके परम प्रेमास्पद भगवान् श्रीकृष्ण

समस्तदुस्तरव्याधिसङ्घध्वंसपटीयसे । अच्युतानन्तगोविन्दनाम्ने धाम्ने नमो नमः ॥

अनाद्यपौरुषेय वेदादिशास्त्रों के अनुसार भगवान् श्रीकृष्ण लोकोत्तर गुणों के महागार हैं । वे ज्ञान-विज्ञान एवं अशेष नीतियों के मूलाधार हैं । वे कोरे धर्मोपदेशक नहीं, किन्तु स्वयं तदनुसार सदाचरण करनेवाले हैं । वे शिष्टों के अनन्यतम मित्र एवं दुष्टों के परमोद्धारक शत्रु होते हुए भी ''स वै बलं बलिनां चापरेषाम्'' (श्रीमद्भागवत ७।८।८) के समुज्ज्वल उदाहरण हैं । अखिलरसामृतमूर्ति भगवान् श्रीकृष्ण के सम्पूर्ण उपदेश त्रिकालाबाधित सत्य एवं समुपयोगी हैं । श्रीमद्भागवत १२।३।४५ के अनुसार प्राणिमात्र के अन्तःकरण में समवस्थित पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण का पावन स्मरण करते ही कलि के सारे पाप और द्रव्य, देश तथा आत्मा के दोष विनष्ट हो जाते हैं-

''पुसां कलिकृतान्दोषान्द्रव्यदेशात्मसम्भवान् । सर्वान्हरति चित्तस्थो भगवान्पुरुषोत्तमः ॥''

अकारणकरुणावरुणालय समदृष्टि भगवान् श्रीकृष्ण सुहृद्, मित्र, वैरी, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषी, बन्धुगणों, धर्मात्माओं तथा पापियों में भी समान भाव रखनेवाले होने से अत्यन्त श्रेष्ठ हैं; श्रीमद्भगवद्गीता ६।९-

''सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु । साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥''

जिस भगवान् श्रीकृष्ण ने उभयपक्ष में सन्धिप्रयास के समय स्वयं ही घोषणा की थी; महा.उद्योगपर्व १९।२८-

''यस्तान्द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्ताननु स मामनु । ऐकात्म्यं मां गतं विद्धि पाण्डवैर्धर्मचारिभिः ॥''

जो पाण्डवों का वैरी है, वह मेरा वैरी है और जो उनके अनुकूल है, वह मेरे अनुकूल है । मैं धर्मात्मा पाण्डवों से पृथक् नहीं हूँ । तथापि वैरियों के भी बल सर्वसुहृद् भगवान् श्रीकृष्ण ने उस समय अपने सैन्यबल से दुर्योधन की सहायता की । भगवान् के परमौदार्यपूर्ण सहयोग को प्राप्त कर दुर्योधन भी स्वयं को कृतकृत्य मानने लगा और भगवद्भावविरहित होने के कारण ऐसा समझ लिया कि मैंने श्रीकृष्ण को ठग लिया है-

''कृष्णं चापहृतं ज्ञात्वा सम्प्राप परमां मुदम् ।'' (महाभारत उद्योगपर्व ७।२४)

दुर्योधन के उदाहरण से यह बात सिद्ध हो जाती है कि जो अभिमानी मूढ़जन महापुरुषों के प्रभाव-स्वभाव को नहीं जानते, उनको उनकी क्रियाओं में दया, समता एवं उदारता आदि महान् गुण परिलक्षित नहीं होते । परमकृपालु भगवान् ने वारम्वार स्पष्ट किया है- ''सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।'' (श्रीमद्भगवद्गीता ५।२९) मुझे सभी प्राणियों का हितैषी और परमोपकारी माननेवाला भाग्यवान् ही शान्ति को प्राप्त करता है । विरुद्धधर्माश्रय कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुसमर्थ सदसद्बन्धु भगवान् ही सबके वरणीय और सदा मननीय हैं ।

अवतारतत्त्वानुसन्धानान्तर्गत पुराणादि के विभिन्न स्थलों में कहीं भगवान् श्रीकृष्ण को एवं कहीं श्रीबलरामजी को अवतार की श्रेणी से पृथक् रखा गया है, जिसपर भक्तों के द्वारा विविध पक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं । परन्तु भगवान् वेदव्यास ने नरसिंहमहापुराण ५३।३४-३६ में उभयविध भगवद्भक्तजनों के आह्लादक वचनों का रहस्योद्घाटन कर दिया है-

''प्रेषयामास द्वे शक्ती सितकृष्णे स्वके नृप । तयोः सिता च रोहिण्यां वसुदेवाद्बभूव ह ॥
तद्वत्कृष्णा च देवक्यां वसुदेवाद्बभूव ह । रौहिणेयोऽथ पुण्यात्मा रामनामाश्रितो महान् ॥
देवकीनन्दनः कृष्णः .... ॥''

अर्थात् भूभार उतारने हेतु भगवान् श्रीमन्नारायण ने अपनी दो शक्तियों को भूलोक में प्रकट किया- एक श्वेत और दूसरी काली । श्वेतशक्ति रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न होकर 'राम' नाम से प्रसिद्ध हुई और कृष्णशक्ति भगवती देवकी से प्रकट होकर 'कृष्ण' नाम से प्रसिद्ध हुई । इस रहस्यदर्शन से भगवान् श्रीकृष्ण एवं भगवान् श्रीबलराम के भक्तों का परितोष पुष्ट हो जाता है । भगवान् श्रीकृष्ण के ही पृथक् दो रूपों में परिभाषित होने से ''कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्'' (श्रीमद्भागवत १।३।२८) में दोनों की स्वयम्भगवत्ता सिद्ध हो जाती है । श्रीकृष्णोपनिषत् ।६। में मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम ने भी इस रहस्य को प्रकट किया है- ''वेदार्थः कृष्णरामयोः'' अर्थात् वेदों का तात्पर्यभूत ब्रह्म ही श्रीकृष्ण-बलराम के रूप में अवतीर्ण हुआ तथा वह मूर्तिमान् वेदार्थ ही वृन्दावन में ऋग्रूप गोप-गोपियों के साथ क्रीड़ा एवं तद्रूप गौओं की सेवा कर रहा है । त्रेताकालीन सनातनपुरुष भगवान् श्रीराम द्वापर के कृष्णावतार का रहस्य प्रकट कर रहे हैं, इसमें शङ्का नहीं करनी चाहिये । भुशुण्डीरामायण (आदिरामायण) १।९८।१४२-१४३ के अनुसार अनाद्यनन्त भगवान् श्रीराम गोरक्षार्थ स्वयं यमालय में स्थित रहकर शेषावतार लक्ष्मण को भगवान् श्रीकृष्ण के नित्य चिन्मय गोलोकधाम में भेजते हैं और ''सुर अनादि जियँ जानि'' तो प्रसिद्ध ही है-

''स गोलोके विनिश्चित्य तासां खलु गवां स्थितिम् । लक्ष्मणं प्रेषयामास स्वयमास यमालये ॥
रामेणाज्ञप्त एवासौ लक्ष्मणः कृतलक्षणः । गोलोकं प्रययौ तूर्णं सुरभीकुलमण्डितम् ॥''

श्रुति, स्मृति, तन्त्रागम, रामायण, महाभारत, पुराण, उपपुराण, औपपुराण और विविध भाषाओं एवं सत्सम्प्रदायों के आर्षसाहित्यों में भगवान् श्रीकृष्ण के लोकोत्तर शौर्य, ऐश्वर्य, औदार्य, माधुर्य आदि दिव्यातिदिव्य महनीय गुणों का वर्णन किया गया है । सर्वश्रेयस्कर भगवान् श्रीकृष्ण की अप्राकृत लोकोत्तर लीला के सजीव वर्णन में श्रीमद्भागवत एवं महाभारत का स्थान सर्वोपरि है । भगवान् सम्पूर्ण धर्म, ऐश्वर्य, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य, त्याग, प्रेम, दया, विनय, करुणा, क्षमा, शान्ति, सत्य, सन्तोष, सरलता, कोमलता, उदारता, भक्तवत्सलता, धीरता, वीरता, गम्भीरता, निर्भयता, बुद्धिमत्ता आदि उदात्ततम सद्गुणों के महामहार्णव हैं । सभी दिव्यगुणों के रूप में भगवान् स्वयं ही प्रकट हुए हैं, अतः सारे गुणगण भगवान् से अभिन्न हैं । जैसे भगवान् दिव्य चिन्मय हैं, वैसे ही भगवान् के गुण भी अपरिमित, अनन्त, अप्राकृत, अलौकिक, महान्, दिव्य और चिन्मय हैं । श्रीविष्णुमहापुराण ५।३३।४७-४९ में भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वयं को भगवान् शिव एवं चराचर जगत् से अभिन्न बताया है-

''मत्तोऽविभिन्नमात्मानं द्रष्टुमर्हसि शङ्कर ॥ योऽहं स त्वं जगच्चेदं सदेवासुरमानुषम् ।
मत्तो नान्यदशेषं यत्तत्त्वं ज्ञातुमिहार्हसि ॥ अविद्यामोहितात्मानः पुरुषा भिन्नदर्शिनः ।
वदन्ति भेदं पश्यन्ति चावयोरन्तरं हर ॥''

हे शिव ! आप अपने को मुझसे सर्वथा अभिन्न देखें । आप भलीभाँति समझ लें कि जो मैं हूँ सो आप हैं तथा यह सम्पूर्ण जगत्, देव, असुर और मनुष्य आदि कोई भी मुझसे भिन्न नहीं हैं । जिनका चित्त अविद्या से मोहित है, वे भिन्नदर्शी लोग ही हम दोनों में भेद देखते और बतलाते हैं । अभिन्ननिमित्तोपादानकारण भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता ६।३० में एतादृश अभिन्नदृष्टि का फल बताया है-

''यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति । तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥''

जो सबमें मुझे देखता है और सबको मुझमें देखता है, उसके लिये मैं कभी अदृश्य (दूर) नहीं होता और वह मुझसे वियुक्त नहीं होता । समदर्शी महात्माओं के द्वारा भगवान् के अप्राकृत ''जन्म कर्म च मे दिव्यम्'' (श्रीमद्भगवद्गीता ४।९) दिव्य जन्म-कर्म तत्त्वतः सम्वेद्य हैं ।

श्रीमद्भगवद्गीता ५।१९ के अनुसार निर्दुष्टलक्षण ब्रह्म को ही सम कहा गया है- ''निर्दोषं हि समं ब्रह्म'' । भगवद्गुणतत्त्ववेत्ता समदर्शी दिव्यात्मा की अविचल भगवदाकाराकारितवृत्ति हो जाती है । श्रीविष्णुमहापुराण ५।२१।३-४ में भगवान् ने जीवन को सफल बनाने के कुछ महत्त्वपूर्ण सूत्र बताये हैं-

''कुर्वतां याति यः कालो मातापित्रोरपूजनम् । तत्खण्डमायुषो व्यर्थमसाधूनां हि जायते ॥
गुरुदेवद्विजातीनां मातापित्रोश्च पूजनम् । कुर्वतां सफलः कालो देहिनां तात जायते ॥''

कंसवध के पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण-बलराम ने माता-पिता का दर्शन कर उनकी स्तुति में कहा- हे तात ! जो समय माता-पिता की सेवा किये बिना बीतता है, वह असाधु पुरुषों की आयु का भाग व्यर्थ ही व्यतीत हो जाता है । गुरु, देव, ब्राह्मण और माता-पिता का पूजन करते रहने से देहधारियों का जीवन सफल हो जाता है । एतादृश पुण्यात्माओं के प्राशस्त्यवर्णन में भगवान् ने स्पष्ट घोषणा की है; जैमिनीयाश्वमेध २०।४१-

''यस्मिन् क्षणे न पुंसोऽत्र सुकृतं विद्यतेऽनघ । व्याघ्रतस्कर राजन्यसर्पाग्नीनां भयं भवेत् ॥''

हे निष्पाप अर्जुन ! जिस समय इस लोक में मनुष्यों का पुण्य क्षीण हो जाता है, उसी समय उसे व्याघ्र, चोर, राजा, सर्प और अग्नि आदि से भय की प्राप्ति होती है । जैमिनीयाश्वमेध ४०वें अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण की ब्रह्मचर्यसिद्धि का एक अद्भुत प्रसङ्ग है- मणिपुर के राजा बभ्रुवाहन ने युद्ध में अपने पिता अर्जुन का सिर काट दिया । उसकी माता चित्राङ्गदा तथा उलूपी विलाप करने लगीं । बभ्रुवाहन भी शोकसन्तप्त हो अग्नि में प्रवेश करने को उद्यत हो गया । तब उलूपी ने कहा- नागराज शेष के पास संजीवक मणि है, उसे लाकर पार्थ अर्जुन के शरीर का स्पर्श करा दिया जाय तो ये अवश्य ही जीवित हो जायँगे । उलूपी ने उस मणि को लाने के लिये पुण्डरीक को शेषनाग के पास भेजा । शेषराज वह मणि देना चाहते थे, परन्तु अन्य नागों ने नहीं देने दिया । पुण्डरीक निराश होकर लौट आये । तब बभ्रुवाहन ने नागलोक पर आक्रमण कर दिया और नागों को पराजित करके वह मणि प्राप्त कर ली । बभ्रुवाहन मणि लेकर आ ही रहा था, तभी धृतराष्ट नामक नाग के पुत्र दुर्बुद्धि ने अर्जुन का मस्तक चुरा लिया । इतने में श्रीकृष्ण, भीमसेन, कुन्ती, देवकी एवं यशोदा वहाँ आ पहुँचीं । बभ्रुवाहन उन सबको देखकर विलाप करने लगा । तदनन्तर शेषनाग ने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा- भगवन् ! आप चुप क्यों हैं ? आप तो असम्भव को भी सम्भव कर सकते हैं । अर्जुन का मस्तक मँगाइये और मणि के संस्पर्श से उन्हें जीवित करिये । यह सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण बोले-

''शृण्वन्तु सर्वे वचनं मदीयं मन्त्रसंयुतम् । यद्यहं ब्रह्मचर्येण न भग्नो भूतले सदा ॥
तेन मे सुकृतेनाद्य पार्थस्यायातु तच्छिरः । यैर्नीतं ते पतन्त्वद्य भिन्नशीर्षा मदाज्ञया ॥''

यहाँ जितने लोग उपस्थित हैं, सभी मेरे इस मन्त्रयुक्त वचन को सुनें- यदि इस भूतल पर कभी मेरा ब्रह्मचर्यव्रत खण्डित न हुआ हो, यदि मैं अखण्ड ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करता रहा होऊँ तो मेरे उस पुण्य के प्रभाव से अर्जुन का वह मस्तक अभी यहाँ आ जाय और जो लोग उसे चुराकर ले गये हों, वे इसी क्षण धराशायी हो जायँ । भगवान् के मुख से यह बात निकलते ही धृतराष्ट नाग के दोनों पुत्र दुर्बुद्धि एवं दुःस्वभाव नष्ट हो गये और अर्जुन का कटा मस्तक उसी क्षण मणिपुर में आ गया । भगवत्कृपया मणि के संस्पर्श से कर्णपुत्र वृषकेतु और कुन्तीपुत्र अर्जुन- दोनों नवजीवन को प्राप्त कर लिये ।

भगवान् श्रीकृष्ण ने जैमिनीयाश्वमेध के ६५वें अध्याय में कलियुग के कुकृत्यों का वर्णन करते हुए बताया है-

''न विश्वासं करिष्यन्ति देवेषु ब्राह्मणेषु च । कर्मभ्रष्टा भविष्यन्ति चतुर्वर्णाः कलौ युगे ॥५०॥
स्वीयं कर्म परित्यज्य परकीयं प्रकुर्वते । ....॥५१॥

कलियुग में चारों वर्णों के लोग कर्मभ्रष्ट हो जायँगे । वे देवताओं तथा ब्राह्मणों के वचनों पर विश्वास नहीं करेंगे और अपने वर्णाश्रमानुकूल कर्म का परित्याग करके दूसरे का कर्म करनेवाले होंगे । ऐसी विपरीत परिस्थिति में भी अकारणकरुणावरुणालय भगवान् श्रीकृष्ण का अनिर्वचनीय अनन्तसौन्दर्यमाधुर्यमय मङ्गलविग्रहदर्शन एवं भगवन्नाम ही जीवमात्र का परमाश्रय होगा; ब्रह्मवैवर्त्तमहापुराण श्रीकृष्णजन्मखण्ड १११।३८-

''कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते । तस्य भस्मीभवन्त्याशु महापातककोटयः ।।''

'कृष्ण' यह कल्याणकारी मङ्गल नाम जिसकी जिह्वा पर प्रवर्तित होते हैं, उसके अनन्तकोटि महापातक तत्क्षण ही भस्मीभूत हो जाते हैं । भगवान् श्रीकृष्ण की प्रत्येक लीला, कथा, अङ्ग-प्रत्यङ्ग, शृङ्गाराभूषण, परिकर, रास, हास-परिहास तथा लीलास्थल श्रीवृन्दावनधाम आदि सुचिन्तन मात्र से अगणितकोटि जीवों का कल्याण करने में सदैव समुद्यत हैं । पद्मपुराण पातालखण्ड ७३।२७-२८ में भगवान् श्रीकृष्ण ने कृष्णद्वैपायन भगवान् वेदव्यास को बालरूप में दर्शन देकर स्वयं ही इस रहस्य को प्रकट किया है-

''नित्यां मे मथुरां विद्धि वनं वृन्दावनं तथा । यमुनां गोपकन्याश्च तथा गोपालबालकाः ।।
ममावतारो नित्योऽयमत्र मा संशयं कृथाः । ममेष्टा हि सदा राधा सर्वज्ञोऽहं परात्परः ।।''

हे मुने ! तुम मेरी इस मथुरापुरी को नित्य समझो । यह वृन्दावन, यह यमुना, ये गोपकन्यायें तथा ग्वाल-बाल सभी नित्य हैं । यहाँ जो मेरा अवतार हुआ है, यह भी नित्य है; इसमें संशय न करना । राधा मेरी सदा की प्रियतमा हैं- ''गोप्यस्तु श्रुतयो ज्ञेया ऋचो वै गोपकन्यकाः ।७३।३२। ''गोप्यो गाव ऋचस्तस्य यष्टिका कमलासनः ।
वंशस्तु भगवान् रुद्रः शृङ्गमिन्द्रः सगोसुरः ।।'' (श्रीकृष्णोपनिषत् ८)

गोपियाँ श्रुतियाँ हैं, वेद की ऋचाएँ ही गोपकन्याओं एवं गौओं के रूप में अवतीर्ण हुई हैं । कृष्णोपनिषत् के अनुसार भगवान् श्रीराम की आज्ञा से भगवदालिङ्गेच्छु मुनियों ने भी कृष्णावतार के समय गोपियों का रूप धारण किया है । ब्रह्माजी ने यष्टिका का रूप धारण किया है, भगवान् रुद्र वंशी बने हुए हैं तथा स्वयम् इन्द्र शृङ्गरूप वाद्ययन्त्र बने हुए हैं ।

भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीकृष्णयामलमहातन्त्र में श्रीबलरामजी के पूछने पर अपने त्रिभङ्गत्व या बाँकेपने का रहस्योद्घाटन किया है- ''त्रिभङ्गत्वं कामिनीनां मनोनयनरञ्जनम् ।।१२।३।।'' मेरा त्रिभङ्गत्व भगवत्सम्मिलनोत्सुक कामिनियों के मन और नेत्रों को सुख देनेवाला है । जब मैं मणिबद्ध दिव्य कदम्बतरुमूल में स्वप्रतिबिम्ब को निहार रहा था, तब अनन्तकोटिकन्दर्पकमनीय स्वविग्रह को देखकर मैं स्वयं मनोमुग्ध हो गया और उसी क्षण भगवल्लीलासञ्चारार्थ लोकोत्तर शृङ्गार रस का प्रादुर्भाव हुआ । दिव्य आनन्दोल्लास के लिये मैंने भी स्वयं को अप्राकृत नर-नारी के दो पृथक् रूपों में प्रकट किया । उन सर्वाभरणभूषित दिव्यातिदिव्य अलौकिक मोहनाकृति श्रीराधिकाजी को देखकर मैं विस्मित और मदोन्मत्त हो गया । उनके आत्मार्पितकटाक्षबाणवर्षण से मैं स्तब्ध और व्याकुल हो गया । उनके कोटिचन्द्राभाधिक मुखमण्डल को देखते-देखते ही मुझ सर्वेश्वर की ग्रीवा तिर्यक् यानी टेढ़ी हो गयी- ''तिर्यग्ग्रीवत्वमगमन्मम सर्वेश्वरस्य तु ।१२।३३।'' शृङ्गाररसमिश्रित उस अलौकिक प्रेम के परमानन्दोल्लासमय योग से बहुरूप धारण करने की इच्छा होते ही सुबलादि गोपों का प्रादुर्भाव हुआ । वे सामने उन अप्रतिम वरारोहा दिव्यसुन्दरी को देखकर लज्जा से अधोमुख हो पुनः मेरे अङ्गों में ही प्रविष्ट हो गये । श्रीराधिकाप्रेमपाशसम्बद्धचित्त मेरे मणिनूपुरयुग्मवेष्टित चरणकमल के दर्शन की लालसा से महत्तेजःसम्पन्न प्रणयाविष्टचेता मदनुरागियों ने प्रेमवचसा मेरी स्तुति की-

''हे नाथ चरणं त्वेकमस्मभ्यं दर्शय प्रभो ॥१२।३८॥
तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां तुष्टये स्वयमेव हि । ध्वजवज्राङ्कुशाम्भोजलक्षणं दक्षिणं पदम् ॥३९॥
तिर्यग्ग्रीवमुदारश्रीर्ब्रह्मविष्णुशिवार्चितम् । अकार्षं राम सततं यतोऽहं भक्तवत्सलः ॥४०॥
कृत्वाऽऽत्मनोऽपि दुःखौघं भक्तानां सुखकारकः । भक्ता मम प्रिया नित्यं भक्तानामस्म्यहं प्रियः ॥४१॥
एतान्येव कारणानि त्रिभङ्गत्वं गतस्य मे ॥४२॥''

हे नाथ ! महायोगीन्द्रदुर्लभ अपने एक चरणारविन्द का हमें दर्शन कराइये । इतना सुनकर तिर्यग्ग्रीवमुदारश्री करुणावरुणालय भक्तवत्सल बाँकेविहारी भगवान् श्रीकृष्ण ने उन प्रणयपूर्णानुरागियों की तुष्टि के लिए ब्रह्मविष्णुशिवाद्यर्चित ध्वजवज्राङ्कुशकमललक्षण कोटिकमलपरागकोमल दक्षिणचरणकमल का स्वभक्तजनसुलभ दिव्य दर्शन करा दिया । भगवान् कहते हैं, हे राम ! मैं भक्तवत्सल हूँ, स्वयं दुःखराशियों का वहन कर स्वभक्तों को सुख देता हूँ; क्योंकि भक्त मेरे प्रिय हैं और मैं भक्तों का प्रिय हूँ । ये ही मेरे त्रिभङ्गत्व (यानी शरीर सीधा न होकर तीन स्थानों से मुड़ा होना- घुटने से एक दिशा में, कमर से दूसरी दिशा में और कन्धों के ऊपर से दूसरी दिशा में । नर्तनक्रिया में स्त्री-पुरुष के आधार पर कदाचित् भङ्ग में अन्तर भी होता है) के कारण हैं ।

विभिन्न तन्त्रागमग्रन्थों में भगवान् श्रीराधाकृष्ण के सूक्ष्मातिसूक्ष्म उपासनानुष्ठान उपलब्ध हैं, परन्तु दैववशात् कथा-व्यथा, रास-विलास-परिहासरूप मनोनयनरञ्जनमात्र ही अब शेष रह गये हैं । श्रीरामायण-भागवतादि का आनुष्ठानिक स्वरूप समाप्तप्राय ही हो चुका है, जो महच्चिन्तनीय है । श्रोता-वक्ताओं को श्रीमद्भागवतादि के आनुष्ठानिक पावित्र्य की किञ्चित् भी चिन्ता होती तो प्रकृतिसिद्ध रजःपात या अन्य सूतकादि से व्यासपीठ को प्रदूषित नहीं करते । वेदज्ञब्राह्मणेतर, पुरुषेतर या द्विजबन्धुओं के अतिक्रमण से पवित्र व्यासपीठ को अवश्य ही बचाते । सरसकथावक्ता या मनोनयनरञ्जनमात्रप्रवृत्त श्रोतृसमुदाय के द्वारा छः महीने में रटी-रटायी भागवतकथा के अतिरिक्त विभिन्न पुराणों, महाभारत एवं भगवद्भक्तिविषयक अन्यान्य सद्ग्रन्थों में प्रतिपादित भगवान् श्रीराधाकृष्ण की भक्तिप्रेमविवर्द्धिनी अतिरहस्यमयी लीला-कथाओं का भी कथन-श्रवण करना चाहिए । श्रीमद्देवीभागवत, श्रीमद्देवीमहापुराण, पद्ममहापुराण, ब्रह्मवैवर्त्तमहापुराण एवं श्रीराधातन्त्रादि में प्रतिपादित भगवान् श्रीराधाकृष्ण के अतिगम्भीर रहस्यों का प्रकटीकरण अनिवार्य होना चाहिए ।

पद्ममहापुराण पातालखण्ड ७४।१७-१९ में स्वसखा अर्जुन के वारम्वार आर्त्तनिवेदन करने पर दयानिधि भगवान् श्रीकृष्ण ने एक अतिगोपनीय रहस्य का प्राकट्य किया है । अर्जुन ने गोपियों की और महारास की गोपनीयता एवं महारासस्थल को जानने की इच्छा की । भगवान् ने अर्जुन से ब्रह्मादि के लिये भी अद्रष्टव्य रहस्य को सुनने का आग्रह छोड़ देने के लिये कहा, अर्जुन ने आर्त्तभाव से भगवान् के युगलचरणारविन्दों का आश्रय लिया; भक्तवत्सल भगवान् प्रणयी अर्जुन को उठाकर बड़े प्रेम से कहने लगे-

''तत्किं कथनेनात्र द्रष्टव्यं चेत्त्वया हि यत् । यस्यां सर्वं समुत्पन्नं यस्यामद्यापि तिष्ठति ॥
लयमेष्यति तां देवीं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी । आराध्य परया भक्त्या तस्यै स्वं च निवेदय ।
तां विनैतत्पदं दातुं न शक्नोमि कदाचन ॥''

अर्जुन ! यदि तुम उस गुप्त स्थान को देखना ही चाहते हो तो यहाँ उसका वर्णन करने से क्या लाभ ? जिस देवी से अनन्तानन्त ब्रह्माण्ड का आविर्भाव हुआ है, वह अब भी जिसमें स्थित है और अन्त में जिसमें लीन होगा, उसी श्रीमती भगवती त्रिपुरसुन्दरी की अत्यन्त भक्तिपूर्वक आराधना करके उनको आत्मसमर्पण कर दो; क्योंकि उन देवी के बिना वह स्थान उपलब्ध करा देने में मैं भी कभी समर्थ नहीं हूँ ।

भगवान् की बात सुनकर आनन्दातिरेक से अर्जुन के नेत्र भर आये और भगवदाज्ञानुसार वे सर्वेश्वरेश्वरी भगवती त्रिपुरसुन्दरी के समाराधन में प्रवृत्त हो गये । अर्जुन की उपासना तथा उनपर दयानिधि का परम अनुग्रह जानकर भगवती ने कृपावृष्टि की और कूलकुण्ड नामक सरोवर में स्नान करने को कहा । अर्जुन के स्नानोपरान्त भगवती ने उन्हें सविधि बालात्रिपुरसुन्दरी मन्त्र की दीक्षा देकर शीघ्रातिशीघ्र कृष्णलीलाप्रवेशार्थ उनसे आनुष्ठानिक प्रयोग कराया । तदनन्तर भगवती की आज्ञा से उसकी सहचरी के साथ अर्जुन राधापति भगवान् श्रीकृष्ण के अतिगुप्त स्थान पर गये, जो सिद्धों के लिये भी अगम्य है । देवीसहचरी के उपदेश से अर्जुन ने गोलोक से ऊपर अवस्थित नित्यरासोत्सव वाले नित्यवृन्दावनधाम का दिव्यदर्शन किया और प्रेमोद्रेक से विह्वलता के कारण मूर्छित होकर वहीं गिर पड़े । देवीसहचरी ने दोनों भुजाओं से उन्हें उठाया । अर्जुन उठे और भगवल्लीलादर्शनार्थ पुनः उनसे विशेष तप की आज्ञा माँगी । देवीसखी ने एक शुभद सरोवर में प्रवेश की आज्ञा दी । अर्जुन के जल में प्रवेश करते ही वह अन्तर्धान हो गयी और अर्जुन जब जल से निकले तो अपने को सम्भ्रम में पड़ी हुई एकाकिनी सुन्दरी रमणी के रूप में देखा; पद्म.पातालखण्ड ७४।७२-

''आश्चर्यललनां श्रेष्ठामात्मानं स व्यलोकयत् । विसस्मार च यत्किञ्चित्पौर्वदेहिकमेव च ॥''

अर्जुन गोपीरूप को प्राप्त हुए, तत्पश्चात् व्योमवाणी की आज्ञा से श्रीकृष्णप्रेयसियों का दर्शन-संलाप हुआ । प्रियमुदा नाम की मनस्विनी बाला ने महारासमण्डल में प्रवेश में लिए अर्जुनी को सविधि राधिकामन्त्र की दीक्षा दी, अर्जुनी ने पुरश्चरण सम्पन्न किया । तदनन्तर उन्होंने देवी की स्तुति की, भगवती राधिका प्रसन्न हो प्रकट हुई और मनोवाञ्छित वर दिया । पुनः श्रीराधिकाजी ने अर्जुनी को श्रीकृष्णमन्त्र की दीक्षा देकर पुरश्चरण कराया । प्रसन्न हो भगवान् ने उस अर्जुनी सखी को अपने पास बुलाया । श्रीराधाभगवान् का दिव्य युगलदर्शन करते ही अर्जुनी मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी । भगवान् की आज्ञा से अर्जुनी को क्रीड़ासर में स्नान कराया गया, अर्जुनी स्नान एवं भगवत्संस्पर्श से पुनः अपने पूर्वरूप को प्राप्त कर गयी । तब १९६-१९७ में श्रीकृष्ण ने हाथ पकड़कर अर्जुन से कहा-

''धनञ्जय त्वामाशंसे भवान् प्रियसखो मम । त्वत्समो नास्ति मे कोऽपि रहोवेत्ता जगत्त्रये ॥
यद्रहस्यं त्वया पृष्टमनुभूतं च तत्पुनः । कथ्यते यदि तत्कस्मै शपसे मां तदार्जुन ॥''

धनञ्जय ! तुम मेरे प्रिय सखा हो, इसलिए मैं तुमसे इस विषय को प्रकाशित करता हूँ । तीनों लोकों में तुम्हारे अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है, जो मेरी इस रहस्यलीला का ज्ञाता हो । जो रहस्य आज तुमने मुझसे पूछा और पुनः उसका अनुभव किया, इसे यदि तुम अन्यों से कहोगे तो मुझे अपमानित करोगे । इसे अत्यन्त गोपनीय रखो । तदनन्तर श्रीवृन्दावनधाम का रहस्य एवं नारदजी के गोपीभावप्राप्ति का दिव्य प्रतिपादन आदि अवश्य ही देखने-मनने चाहिये । आज गोपी बनना तथा महारास आदि बहुत सस्ते हो चुके हैं । गरुड़महापुराण, भविष्यमहापुराण आदि भगवान् श्रीकृष्ण के दिव्य उपदेशों से लबालब भरे हैं । आदिपुराण में भगवान् के वचनामृतों का पान करना चाहिये । विविधभाष्यसहित श्रीमद्भागवतमहापुराण का गहन मनन-चिन्तन आवश्यक है । गर्गसंहिता में भगवान् की दिव्यातिदिव्य लीलाओं का दर्शन कर्तव्य है । महाकविविद्यापतिपदावली, गीतगोविन्द, राधानयनद्विशती आदि निभृतनिकुञ्जाधिकारियों के प्राण हैं । श्रीकृष्णकर्णामृत, श्रीराधासुधा, श्रीराधासुधानिधि आदि का कहना ही क्या !

धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाभागप्रणीत भगवद्विषयक सभी व्याख्यान संसेव्य हैं । भगवान् श्रीराधाकृष्ण की सरलतम रहस्यलीलान्वेषण के लिए गीताप्रेस से प्रकाशित श्रीकृष्णाङ्क, श्रीकृष्णवचनामृत, ईश्वराङ्क आदि पठनीय हैं । श्रीमद्भगवद्गीतामृत का सेवन जिसने नहीं किया, उसका तो शरीरधारण करना ही व्यर्थ चला गया । भगवान् के अहैतुक अनुग्रह से ही यह देवदुर्लभ मनुष्यशरीर मिला है । हमें भगवत्कृपा की प्रतीक्षा नहीं, प्रतिक्षण सुसमीक्षा करनी चाहिये । सर्वलोकोपकारिणी भगवत्कृपा की वृष्टि दिन-रात हो रही है, श्रीमद्भागवत १०।१४।८ में ब्रह्माजी का यही उद्घोष है-

''तत्तेऽनुकम्पां सुसमीक्षमाणः''

॥ श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु ॥